International Journal of Scientific Research in Science and Technology
© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X

महिला सशक्तिकरण एवं सामाजिक असमानता : एक अध्ययन

डॉ0 कुमारी नम्रता
एम.ए., पीएच.डी. (गृह विज्ञान)
बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर (बिहार)

किसी भी राष्ट्र या समाज की आधारशिला महिला है। महिला की स्थिति जितनी मजबूत होगी, राष्ट्र या समाज उसी अनुपात में विकसित होगा। वैदिककाल में महिलाओं की स्थिति काफी सुदृढ़ थी इसलिए तब का हमारा समाज विकसित और अनुकरणीय था। बालकों के समान कन्याओं का भी उपनयन संस्कार होता था और वे भी समान रूप से शिक्षा प्राप्त कर सकती थीं। स्त्रियाँ धार्मिक कार्यों में भाग लेती थीं, वे गृहस्वामिनी, अर्द्धांगिनी आदि नामों से संबंधित की जाती थीं। अपाला, घोषा, विश्ववारा, लोपामुद्रा आदि विदुषी महिलाओं ने वैदिक ऋचाओं की भी रचना की थी। वे ब्रह्मवादिनी और मंत्रद्रष्टा कहलाती थीं। अध्यापन कार्य करनेवाली महिलाओं को 'उपाध्याया' कहा जाता था। विवाहोपरान्त वे 'सद्योवाहा' कहलाती थीं।

19 वीं शताब्दी के भारतीय समाज–सुधारकों और विचारकों यथा–राजाराम मोहन राय, केशवचन्द्र सेन, गोविन्द रानाडे, स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द प्रभुति ने उपर्युक्त सत्य का साक्षात्कार किया और महिलाओं के उत्थान के लिए अनेक प्रयास किये। राजाराम मोहन राय की मान्यता थी कि स्त्रियाँ कभी भी बुद्धि और योग्यता की दृष्टि से पुरूषों से कम नहीं हैं। उन्होंने सती प्रथा, बालविवाह, बहुविवाह, बहुविवाह और विधवा विवाह कम नहीं हैं। उन्होंने सती प्रथा, बालविवाह, बहुविवाह और विधवा विवाह निषेध का खण्डन किया और इसे हिन्दू धर्मशास्त्र के विरूद्ध

आचरण सिद्ध किया। इनके प्रयास से सती प्रथा का अन्त हुआ और विधवाओं को सम्पत्ति में अधिकार प्राप्त हुआ।

20 वीं शताब्दी में महात्मा गाँधी और अन्य अनेक महापुरूष महिलाओं के उत्थान और समाज के लिए प्रयत्नशील हुए और उसके सकारात्मक परिणाम भी सामने आने लगे। फलतः स्वातंत्र्योत्तर काल के पचास के दशक से ही सरकारी योजनाओं और कार्यक्रमों में 'महिला कल्याण' शब्द प्रयुक्त होने लगे। अस्सी के दशक में 'महिला विकास' तथा नब्बे के दशक में महिलाओं को पुरूषों की बराबरी और समानता के अधिकार के लिए आन्दोलन हुए। नब्बे के दशक के अंतम चरण में 'महिला अधिकारिता' और 'महिला सशक्तिकरण' शब्द काफी अर्थपूर्ण होकर उभरा। महिला सशक्तिकरण का तात्पर्य ऐसी सामाजिक प्रक्रिया से है जिसमें महिलाओं के लिए सर्वसम्पन्न और विकसित होने हेतु संभावनाओं के द्वार खुले, नये विकल्प तैयार हो तथा प्रतिभाओं के विकास हेतु पर्याप्त रचनात्मक अवसर प्राप्त हो। महिलाओं को पुरूषों के बराबर वैधानिक, राजनैतिक, शारीरिक, मानसिक, सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्रोंमें उनके परिवार, समुदाय, समाज एवं राष्ट्र की सांस्कृति पृष्ठभूमि में निर्णय लेने की स्वायत्तता ही सशक्तिकरण है। भारत में महिला सशक्तिकरण का प्राथमिक लक्ष्य महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक दशा को उन्नत बनाना है। इसके लिए स्त्रियों को स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार के अवसर तथा राजनीतिक एवं संवैधानिक अधिकार से शिक्षा, रोजगार के अवसर तथा राजनीतिक एवं संवैधानिक अधिकारों से अलंकृत कर स्वायत्तता प्रदान करनी होगी तथा उनकी उस कुण्ठा को दूर करना होगा कि वे 'वस्तु मात्र' हैं, बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में महिला सशक्तिकरण के लिए कई प्रयास किये गये हैं और आज भी किये जा रहे हैं। अब तो राजनैतिक एवं संवैधानिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण लागू करने की पहल की जा रही है। ऐसी स्थिति में महिला सशक्तिकरण का अध्ययन समीचीन है।

पुरूष ने शासन का अधिकार स्वयं के पास रखा। उसने अपनी सम्राज्यवादी लिप्सा के अंतर्गत युद्ध लड़े और वह अपने बाहुबल से मानवता को पाश्विक दासत्व देता रहा। आज भी आर्थिक औपनिवेषवादी अर्थलिप्सा के संदर्भ में विश्व शीत युद्ध की अंधेरी भयानक छाया में जी रहा है–जहाँ मानवता का अस्तित्व सदा असुरक्षित रहता आया है।

इस सत्ता–लौलुपता के आत्मप्रदर्शन के अहंकारी चक्कर में पुरूष ने सदा शांति का मानवीय जीवन को चिर सत्य नहीं बनने दिया, जिसने मानव समाज में पुरूष वर्चस्व का साम्राज्य चलता आ रहा है। पुरूष ने जो भी विधि विधान बनाये, अपनी इच्छा से बनाये, महिला की राज्य सत्ता में राजनीतिक सहभागिता की कभी चिन्ता नहीं की और वह पुरूष वर्चस्व दर्शन से ही समाज की व्यवस्था चलाता आ रहा है।

आज के इस चैतन्य युग में जहाँ मानवता शांति का प्रश्रय चाहती है, महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता एक आवश्यकता बन गई है। यदि पुरूष महिला का विश्व मानव समाज या शांति व समुन्नति के दर्शन के क्रियान्वयन के लिय सकारात्मक सहयोग लेना चाहता है जो कि वास्तव में इस प्रजातंत्रीय शासन प्रणाली युग की अ अनिवार्यता बन गई है, तो पुरूष समाज द्वारा महिला समाज को राजनीतिक सत्तातन्त्र व व्यवस्था में विश्वसनीय प्रभावी भागीदारी देनी होगी, जिनके लिये वह चाहे आरक्षण की नीति अपनाये या फिर संरक्ष्ज्ञण की यह पुरूष के नैतिक विवेक पर आधारित है। महिला का उसका 'स्व' देना ही होगा और राजनीतिक सत्तातन्त्र महिला विरोधी नहीं हो सकता है।

'महिला समानता', 'कल्याण', 'सुरक्षा', 'संरक्षण', 'लिंग न्याय', 'सामाजिक न्याय' जैसे कितने ही नाम व वादे देने के पश्चात् संयुक्त राष्ट्र संघ ने अब विश्व आधी जनसंख्या के रूप में जीवन जीती 'महिला' के समुचित विकास की बात की है और यह मान्यता अभिव्यक्त की है कि महिला पुरूष के संदर्भ में समाज में राजनीतिक रूप से सबल किये बिना

अर्थात् महिला सबलता का शक्तिकरण किये बिना महिला जाति का पुरूष अधिशासित समाज में समग्र, सम्पूर्ण वांछित व इच्छित विकास संभव नहीं है। इस नवीन विकास दर्शन को महिला सबलीकरण या शक्तिकरण का नाम दिया गया है।

उक्त राष्ट्र उद्देश्य की पूर्ति के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य राष्ट्रों से यह अपेक्षा की गई है कि महिलाओं को राजनीतिक सत्ता में सहभागिता का अधिकार मिले, ताकि वे राज्य व राष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक व सामाजिक विकासोन्मुखी नीति निर्धारण में व कार्यक्रम क्रियान्वयन में अपने प्रभावी सकारात्मक व रचनात्मक भूमिका निर्वाहन कर सके, जिसके संदर्भ में राजनीतिक सत्ता भागीदार महत्वपूर्ण है।

जहाँ तक महिलाओं को पुरूष के समान राजनीतिक सहभागीता का प्रश्न है, यह आज की विश्व की आधुनिक सभ्यता का चर्चित व चिंतनीय विषय हो गया है। कारण यह है कि पुरूषों के समान जनसंख्या वाली महिलाओं को विश्व के अधिकांश देशों में एक ओर तो पुरूषों के समान राजनैतिक अधिकार प्राप्त है और दूसरी ओर अभी भी मुस्लिम देशों में महिलाओं को मत देने तक का राजनैतिक अधिकार प्राप्त नहीं है, कुवैत में तो यह ज्वलन्त बिन्दु बन गया है।

अब यह ऐसा अनुभूत किया जा रहा है कि इस राजनीतिक सत्ता व संगठन में महिलाओं का सहभागीदारी मिलना विश्व मानवता के हित में महिलाओं का आवश्यक है, ताकि राजनीतिक निर्णय प्रक्रिया में महिलाओं की भागदारी सुनिश्चित की जा सके। इस सहभागी संवर्धन के लिए आवश्यक है कि राष्ट्र की व्यवस्थापिकाओं में महिलाओं की अधिक उपस्थिति हो, ताकि इसका मनोवैज्ञानिक प्रभाव पुरूषों पर पड़ता रहे और वे एक पक्षीय पुरूष हित में निर्णय न ले सकें तथा इसमें सहराजनीतिक संतुलन बना रहे, जिससे पुरूष का भर्द निरंकुश सत्ता मद में उनमुक्त न हो सके।

आज का युग प्रजातंत्रीय शासन प्रणाली का है, जो स्त्री व पुरूष को समान जीवन जीने व उन्नति तथा उत्थान के समान अवसरों की अपेक्षा करता है। किन्तु व्यवहारिक दृष्टि से देखा जाये तो विश्व के सभी देशों में वहाँ की संसद में पुरूष की तुलना में महिलाओं का नेतृत्व अधिकांशतः नगण्य रहा है। इण्डियन इंस्टीट्यूट ऑफ ओपिनियन के सर्वेक्षण के आधार पर विश्व के प्रमुख देशों में वहाँ की संसद में महिलाओं की तुलनात्मक स्थिति आकलन से स्पष्ट हुई है, जिससे यह बल मिलता है कि विकासशील देश विकसित देशों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व संतोषप्रद नहीं कहा जा सकता है।

बिना सबलता के सबलीकरण कैसी ? जब तक महिला की महिमा का मानवीय रूप से व्यवहारिक सत्ता महिमा मंडनीकरण न हो ? तब तक महिला सबलीकरण संभव नहीं ? महिला की महिमा उसके शक्ति संतुलन में हैं ? महिला की रचनात्मक शक्ति का सत्ता संतुलन में प्रयोग व उपयोग हो, तो समाज का कल्याण आवश्यम्भावी है।

वर्तमान समाज में राजनीतिक सत्ता का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि सत्ता के समीकरणों से ही व्यवस्था के शिव सुर गूँजते हैं, तो विनाश की रणभेरी भी बजती है। महिला जो मूलतः रचनात्मक शक्ति पुन्जा है, उसके सत्ता सिंहासन प्राप्ति व संचालन की राजनीति में महत्वपूर्ण योगदान को स्वीकार करते हुए उसकी सहभागिता को भी सुनिश्चित कर दिया जाये, तो उस समाज की उन्नति अवश्यम्भावी है। समाज की उन्नति का निर्णय सामुहिक होना चाहिये, जिसमें लिंग भेद व लिंग अधिशासित या श्रेष्ठता स्वीकार्य नहीं है। अंकेक्षण साक्षी है कि विकास की रेखाएँ तभी नीचे की ओर झाँकती है, जबकि सामुहिक कल्याण संबंधी निर्णयों में लिंग श्रेष्ठता होती है। जब भी महिलाओं को सामूहिक निर्णयों से बाहर रखा गया है, विकास में विषमताएँ ही दृष्टिगत होती है।

तो फिर क्या पुरूष ने अपनी इच्छा से महिला के स्वत्रति निर्णय अधिकार का बालात् अपहरण नहीं कर रखा है? यदि ऐसा किया है, तो किस अधिकार से? किस अलौकिक या सार्वभौम आदेश से? इस बलात् अपहरण के कारण ही असमानता, विषमता व असफलता से उत्पन्न नैराश्य हर जगह परिलक्षित हो रहा है। यदि इस वैशम्य उद्भूत नैराश्य से समाज को उभरना है, तो नीति निर्धारण से लेकर नीति क्रियान्वयन की हर अवस्था व हर पग पर महिला सुभागिता निश्यित करना ही एकमात्र समुचित लोकतन्त्रीय उत्तर है। स्त्री व पुरूष के अन्योन्य पराश्रयता व परस्पर सहभागिता के अतिरिक्त अन्य कोई दूसरा न तो विकल्प है और न कोई उत्तर।

राजनीतिक प्रक्रियाओं व संस्थागत निर्णय क्षेत्रों में महिला सहभागिता आज एक अनिवार्यता बन गई है।

आज विश्व समाज यह महसूस कर रहा है कि नीति–निर्धारक सैद्धान्तिक में परिवर्तन लाना आवश्यक है। आज का विश्व समाज अपनी समस्याओं का समाधान महिला व पुरूष के लिंग भेद के अन्तर के साथ नहीं कर सकता और न ही समाज की समग्रता की उपेक्षा कर किसी भी उन्नति या विकास का स्वप्न संजोया जा सकता है। समाज का शिवत्व उसके समग्र कल्याण की सामूहिकता में निहित है। महिला को एक राष्ट्रीय प्राणी मानकर राष्ट्रीय समस्याओं से उसे सम्बद्ध करना ही होगा और यह विषय केवल एक पुरूषमात्र का अधिकार क्षेत्र बनाकर नहीं रखा जा सकता।

इस पर विशेष बल दिया जाना आवश्यक होगा कि राष्ट्रीय समस्याओं से महिलाएँ भी किस प्रकार प्रभावित होती हैं और वे इनका हल स्वयं कैसे ढूँढ़ सकती है। यह तभी सम्भव हो सकता है कि महिलाएँ भी पुरूष के साथ–साथ शासकीय सत्ता में बराबर की साझीदारी हो व समग्र राष्ट्रीय समस्याओं का पुरूष व महिलाएँ मिलकर समान रूप से समाधान खोजें।

आज का राजनैतिक परिदृश्य क्या है जैसा कि सर्वविदित सत्य है कि कोई भी राजनीतिज्ञ न तो सैद्धांतिक रूप से इस व्यवस्था को नकारता ही है और न ही ऐसे निषेध का प्रजातन्त्र ही; किन्तु फिर भी समस्या का बिन्तु कहाँ विश्राम करता है। यह जानना आवश्यक है।

यह आश्चर्यजनक सत्य का न्यास है व वैषम्य कि एक ओर तो सैद्धांतिक रूप से राष्ट्रीय राजनीति महिला सहभागिता को नहीं नकारती, किन्तु जिसको सैद्धान्तिक रूप से स्वीकार करती हैं, उसकी व्यवहारिक पालना नहीं होती। इस प्रकार यह कथनी न करनी का अन्तर है, जो समस्या का मूलक है।

राजनीति सत्ता के गलियारे के द्वार न तो पुरूष ने महिला के लिए पूरी तरह से बन्द ही किये हैं न पूरी तरह खोले ही हैं।

राजनीतिक सत्ता क्षेत्र में महिला पदार्पण पुरूष की विवशता के फलस्वरूप ही है, अन्यथा पुरूष यह नहीं चाहता कि महिला भी उसके लाभ में सहभागी हो।

प्रजातान्त्रिक शासन व्यवस्था में पुरूष की यह विवशता रही है कि वह महिला को कम से कम नाम के लिए अपने साथ लाये और अपरिहार्य परिस्थितियों में ही उसे आगे बढ़ाये।

यह इस कारण सम्भव है कि राजनीतिक प्रजातान्त्रीय शासन सत्ता प्रासाद का द्वारपाल पुरूष ही तो है और उसने जानबूझकर महिला को प्रासाद में प्रविष्ट होने नहीं दिया, उसने यह राजमार्ग को ही अवरूद्ध कर दिया जो महिला को सत्ता राजप्रसाद तक ले आता है।

महिला को सदा ही पुरूष की प्रतिभा ने आकर्षित किया, पुरूषत्व की गरिमा ने उसको पुरूष का होने के लिए प्रेरित किया है, पुरूषत्व की पूर्णता ने ही महिला को सदा अपनी अपूर्णता का आभास दिलाया है और महिलात्व की 'श्री' को पुरूषोत्तम से एकाकार होने के लिये लालायित किया है। मंजुल, मनोरम, पराक्रमी, विवेकी महिला वत्सल, कृपालु, क्षमाशील, विशाल हृदय,

शान्ताकार, पद्मनाभ, सुरेश रूप सबल, साहसी पुरूष ही महिला कल्पना का अन्तिम शोभन शिव सत्य रहा है।

महिला मनमोहन पुरूष की ही होकर जीना चाहती है। उसका अतृप्त महिलात्व विष्णु स्वरूप पूर्ण पुरूष का सानिध्य रूप प्रीतामृत पाकर ही तृप्त होता है। महिला सदा 'पुरूष भाष्कर' को चाहती है, वह मार्तण्ड पुरूष हो नहीं। वह शीतल शशि की चाहत रूप चकोरी है, वह युग दुर्गुण रूप ग्रह ग्रसित कलुश हृदयी चन्द्र रूप पुरूष को नहीं चाहती, जो पुरूष महिला के सतीत्व की रक्षा कर सके और उसमें छिपे मातृत्व को प्राणायाम दे सके, पूर्णतत्व दे सके, वही पुरूष महिला का हृदयेश्वर व प्राणाधार है।

किन्तु महिला की दृष्टि में का पुरूष सदा हेय है, उसका संसर्ग उसके कोमल कलिका रूप हृदय में शूल की तरह चुभता है। पुरूष महिला के संदर्भ में गुण निधान है, जैसा भी हो, जो भी पुरूष उसको मिलता है, यदि वह महिला को सहृदय अपनाता है, महिला की प्रीति को प्रेमालिंगन का मधुर उपहार देता है, महिला को समग्रता में हृदय तल से चाहता है, वही महिला का प्रियतम प्राणप्रिय हृदय सम्राट होता है। महिला के कलुषित मनोवृत्ति वाले का पुरूष को कभी नहीं चाहा, जो उसके और उसकी संतान के नाम को कलंकित करता है। महिला सब कुछ बाँटकर जी सकती है, किन्तु उसके पुरूष को बाँटकर नहीं जी सकती और न ही चैन से रह सकती है। पुरूष को सच्चे पुरूषत्व के अर्थों में प्यासी महिला को तृत्त करना होता है, उसे संतुष्ट करना होता है, जिसमें उसकी सर्वोपरि चाह है कि उसके नाम से जुड़ा पुरूष उसी का होकर रहे, उसी का बनकर जिये, उसके लिए पुरूष बना रहे। लम्पट पतित पुरूष सहनीय हो सकता है, किन्तु महिला की दृष्टि में सम्माननीय नहीं। महिला को सबसे अधिक वेदना ही वह क्षण देता है, जब जिस पुरूष को चाहे, वह उससे दूर चला जाये और किसी अन्य का होकर रह जाये।

सहृदया महिला लौकिक कष्ट व भौतिक विषमता को सहन कर सकती है, वह दुःखों की कंटक कीर्ण शाखाओं पर सुमन सी खिल सकती है, किन्तु निष्ठुर पुरूष से अपमानित होकर पल भरके लिये भी यह भग्न हृदय सहज होकर नहीं जी सकती है, उसकी मुस्कानें उसका साथ छोड़ देती हैं और सहोदरा 'अश्रुमाला' ही उसकी सच्ची सखी बन जाती है। महिला निष्ठाप्रधान भावना सर गात है, जिसका श्वास व गति केवल सुपुरूष के कारण है, जो उसको सुखका मधुर संदेश देता हो, जीवन को स्वर्गिक लहरी की अनुभूति कराता हो, जो उसके लिये जीता है, उसका शिव बनकर, उसका लक्ष्मण बनकर, उसका पुरूरवा बनकर, उसका विश्वामित्र बनकर, उसका निर्मोही शाषित हृदय सम्राट शकुन्तला का दुष्यन्त बनकर, उसका शशि बनकर, उसका दिवाकर बनकर, उसका सुमन बनकर, उसका दीप बनकर, उसका ही द्वीप बनकर, उसका मेघनाथ बनकर, उसकी महात्मय बनकर उसका श्रीशोभा–सिद्धि–ऋद्धि–सृजन श्रृंगार–सम्राट बनकर, उसका कालि से महाकवि कालिदास बनकर, उसका 'तुलसी दास' बनकर।

महिला प्रीत को विषमता में प्रत्युत्तर नहीं दे सकता है, जो महिला के नयनों की भाषा नहीं समझता है, जिसने महिला के अन्तर की गहराई को नहीं टटोला है, जिसने महिला की गरिमा के शिखर को नहीं छूना चाहा है, जिसने महिला रूपी सीपी के अन्दर छिपा महिलात्व का मोती नहीं तलाशा है, जिसने महिला रूप चंदन वन के सुवास से आह्लादित होना नहीं चाहा है। महिला ने सदा घृणा की है, उस दुर्योधन से, जिसने उसे लज्जित किया है, उस दुःशासन से जिसने उसकी लज्जा का आवरण खींचा है, उसके शील को अनावृत किया है, महिला ने घृणा की है उस कायर से, जो बिना निशानी युद्ध में नहीं जाना चाहता, जो महिला प्रेमपाश में बंधा अपना क्षत्रियत्व भूल गया और पाता है 'सेणानी' रूप में उसी प्रियतम का कटा हुआ शीश।

महिला हर्षिता है, मुदिता है, अर्पणा है, प्रेरणा है, विजया है, लक्ष्मी है, गायत्री है, उस पुरूष के संदर्भ में जो उस प्रियतमा मानता है, सम्मानीया मानता है, पूजनीया मानता है, जो महिला के रक्षणार्थ व शिवार्थ जीता है, महिला के हृदय की धड़कन बनकर रहता है, उसके हृदय तटों में कभी आनन्द की लहर तो कभी भावना का तूफान बनकर मधुर–मधुर टकराता रहता है, उसे प्रेम में आहत करने के लिये, मुदित करने के लिए।

क्या यह कहना अच्छा होगा कि महिला अधिकार के नाम पर आरक्षण धिक्कार का नाटक चल रहा है? पुरूष व्यवस्था का सिरमौर दाता क्यों बना है, जबकि उसकी राजनीतिक सत्ता पर विजय में 50 प्रतिशत तक संसद में उपस्थित रहने का अधिकार क्यों नहीं है? क्या पुरूष की दोहरी नीति धिक्कार योग्य नहीं है। प्रश्न है– सत्यनिष्ठा का, मंतव्य व उद्देश्य की पवित्रता का अन्तःकरण की शुद्धता का। जब यह नैतिक पक्ष की कूटनीति के दल–दल में फँस जाये, तो फिर पुरूष का मन्तव्य ही संदेह के घेरे में घिर जाता है। हर महिला चाहती है कि उसे जीने का सरस अधिकार मिले, उन्नति वह देवी कहलाती है; किन्तु वस्तुतः वह 'दासी' रूप में जीवन जीनी है। उसको शब्दों में श्रद्धान्जलि तो बहुत अर्पित की जाती है, किन्तु व्यवहार में एक सेविका ही मानी जाती है, जबकि विश्व मानक समाज महिला की सकारात्मक सहयोगपूर्ण समर्पित कर्तव्य धारणा, प्रेरणा व अवधारणा पर ही आधारित विश्व को तथाकथित वर्तमान सुसभ्य व सुसंस्कृत समाज स्थित है, प्रतिष्ठित है। उसकी आधारशिला महिला के मेरूदण्ड पर ही टिकी हुई है।

संदर्भ सूची :–

1. मेनन निवेदिता एडि; जेंडर एण्ड पालिटिक्स इन इण्डिया, न्यू देहली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पृष्ठ 379.
2. जन0 एसे0: 2005, वीमैन इन डेवलपमैंट, विकास पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृष्ठ–23.

3. नुसवाम मारथा सी0, 2000, विमैन एण्ड ह्यूमन डेवलपमेंट, शारदा पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली, पृष्ठ 296.
4. अग्रवाल वीणा, 2008, कैपबिलीटिज, फ्रीडम एण्ड क्वालिटी, ऑक्सफोर्ड पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली, पृष्ठ–179.
5. वर्मा जे.एस. 2005, दि न्यू यूनीवर्स ऑफ ह्यूमन राइट्स, यूनिवर्सल लॉ पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, पृष्ठ–58.
6. चन्द्रशेखरम, 2006, एक्सप्रेस ऑफ विमैन फ्राम लीडरशीप पोजीशंस अंडरमाइंस डेमोक्रेसी, निसार पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 5523.
7. वही, पृष्ठ–85.
8. जे0सी0 अग्रवाल, 2004, भारत में महिला शिक्षा, विद्या बिहार, नई दिल्ली, पृष्ठ–110.
9. डॉ0 राम सिंह सैनी, 2007, मानवाधिकारों के विविध आयाम, गगनदीप पब्लिकेशन, दिल्ली, पृष्ठ 52.